Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

भारतीय समाज तथा सामाजिक समस्याएँ

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: CSM10

दृष्टि The Vision

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

भारतीय समाज तथा सामाजिक समस्याएँ

दृष्टि The Vision

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 87501 87501, 011-47532596
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiias.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिए निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

UPSC DLP विषय सूची (Contents)

1.	भारतीय समाज की मुख्य विशेषताएँ एवं विविधताएँ	5–86
2.	महिलाओं की भूमिका	87–106
3.	महिलाओं की समस्याएँ और उनके रक्षोपाय	107–152
4.	महिला संगठन	153–159
5.	नगरीकरण/शहरीकरण	160–187
6.	भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के प्रभाव	188–209
7.	सामाजिक सशक्तीकरण	210–229
8.	सांप्रदायिकता	230–243
9.	क्षेत्रवाद	244–256
10.	जनसंख्या एवं संबद्ध मुद्दे	257–282
11.	गरीबी और विकासात्मक मुद्दे	283–302
12.	धर्मनिरपेक्षता	303–312

अध्याय
1

भारतीय समाज की मुख्य विशेषताएँ एवं विविधताएँ (Salient Features and Diversities of Indian Society)

1.1 वर्ण/जाति व्यवस्था
1.2 परिवार/वंश परंपरा/नातेदारी/विवाह
1.3 ग्रामीण संरचना
1.4 प्रजाति/जनजातीय समुदाय
1.5 अभिजन संरचना
1.6 पितृतंत्र
1.7 धर्म
1.8 शिक्षा
1.9 भारतीय समाज में अनेकता/विविधता

1.1 वर्ण/जाति व्यवस्था *(Varna/Caste System)*

वर्ण व्यवस्था *(Varna System)*

किसी भी समाज के व्यवस्थित संचालन हेतु आवश्यक माना जाता है कि सामाजिक कार्यों का विभाजन व्यक्ति की योग्यता, प्रकृति, प्रवृत्ति एवं उसके गुण व कर्मों के आधार पर किया जाए। व्यक्ति की कार्य क्षमता के आधार पर कर्म विभाजन करने को ही वर्ण व्यवस्था कहा जाता है। साधारण शब्दों में इसे विवेचित कर सकते हैं- जिस व्यवस्था के द्वारा व्यक्ति अपनी कार्य क्षमता के आधार पर कर्म का वरण करता है, वह वर्ण व्यवस्था कहलाती है। वर्ण शब्द की उत्पत्ति 'वृ' धातु से मानी गई है जिसका अर्थ है- वरण करना या चुनना। इसके अतिरिक्त वर्ण शब्द 'रंग' के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। यद्यपि मनुस्मृति में वर्ण व जाति शब्द प्रायः एक ही अर्थ में प्रयोग किये गए हैं, जैसा कि वर्तमान में भी देखने को मिलता है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था का मूलाधार इसी वर्णव्यवस्था को माना गया है। हालाँकि विश्व भर के अधिकांश समाजों में सामाजिक स्तरीकरण का आधार 'वर्ग' को माना गया है। जबकि भारत में प्राचीनकाल से ही 'वर्ण एवं जाति' की व्यवस्था विद्यमान रही है। अनुमान है कि भारतीय समाज में कृषि विकास के परिणामस्वरूप एक नई उत्पादन व्यवस्था विकसित हुई जिसके संचालन के लिये श्रम विभाजन की आवश्यकता पड़ी और परिणामस्वरूप समाज में वर्ण व्यवस्था का उदय हुआ। श्रम एवं व्यवसाय के आधार पर जन्मे इन सामाजिक वर्णों को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र कहा गया। धार्मिक क्रियाओं एवं ज्ञान का संपादन ब्राह्मणों का वर्ण-धर्म माना गया। प्रशासन एवं सत्ता का कार्य क्षत्रियों का। आर्थिक उत्पादन और वितरण कार्य वैश्यों का वर्ण-धर्म था जबकि शूद्रों का वर्ण-धर्म शारीरिक श्रम एवं सेवा का कार्य करना माना गया था। व्यवसाय पर आधारित होने के कारण वर्ण व्यवस्था कठोर नहीं थी। इस संदर्भ में ऋग्वेद का एक प्रसिद्ध उद्धरण महत्त्वपूर्ण है- "मैं कवि हूँ, मेरे पिता वैद्य हैं, मेरी माँ पत्थर की चक्की चलाती है। धन की कामना करने वाले नाना कर्मों वाले हम एक साथ रहते हैं।"

इस प्रकार कह सकते हैं कि वर्ण व्यक्ति के गुण तथा कर्म से संबंधित थे। जिन व्यक्तियों के गुण व कर्म समान थे अर्थात् जो समान स्वभाव के थे, वे सभी एक ही वर्ण के सदस्य माने जाते थे। श्री कृष्ण ने भगवद्गीता में भी कहा है कि "चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः" अर्थात् मैंने ही गुण एवं कर्म के आधार पर चारों वर्णों की उत्पत्ति की है। इस कथन से स्पष्ट होता है कि वर्ण व्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण की ऐसी व्यवस्था है जो व्यक्ति के गुण तथा कर्म पर आधारित है तथा जिसके अंतर्गत समाज का 4 वर्गों के रूप में कार्यात्मक विभाजन हुआ है। गुण व कर्म का यहाँ पर संबंध

विवाह भारत की एक सर्वव्यापी सामाजिक संस्था है। जब भी कोई विवाह संबंध होता है तो उसके माध्यम से नई रिश्तेदारी स्थापित होती है। उत्तर भारत में विवाह के कुछ निषेधात्मक नियम हैं, जिसके तहत विवाह प्रायः गोत्र के बाहर, चतुर्गोत्रीय (पिता, माता, दादी, नानी के गोत्र) सीमा के बाहर तथा गाँव के बाहर होता है। विवाह के ये पारंपरिक नियम नातेदारी के विस्तार के माध्यम रहे हैं। आधुनिक काल में अंतर्जातीय तथा अंतर्धर्मीय विवाहों की प्रवृत्ति शिक्षा, प्रव्रजन, शहरीकरण तथा परिवहन-संचार माध्यमों के विस्तार के कारण बढ़ी है। इन विवाहों को आज कानून द्वारा मान्यता तथा कुछ सरकारों के प्रोत्साहन प्राप्त हैं। इस प्रकार विवाह सामाजिक विभेद को समाप्त करते हुए सामाजिक एकीकरण का एक दूरगामी तथा महत्त्वपूर्ण उपकरण हो सकता है।

ऐसे में विवाह संबंधी नियमों के स्तर पर विषमता को समाप्त करने के लिये एक समान नागरिक संहिता की स्थापना किया जाना आवश्यक हो जाता है। भारत का संविधान राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों में सभी नागरिकों को समान प्रतिबद्धता व्यक्त करता है। यद्यपि इस तरह का कानून अभी तक लागू नहीं किया जा सका है, जबकि विश्व के अधिकतर आधुनिक देशों में ऐसे कानून लागू हैं। महत्त्वपूर्ण है कि अलग-अलग धर्मों के लिये अलग सिविल कानून न होना ही समान नागरिक संहिता की मूल भावना है। इसके अंतर्गत निम्नलिखित मामले आते हैं-

- व्यक्तिगत स्तर के मामले।
- संपत्ति के अधिग्रहण और संचालन का अधिकार।
- विवाह, तलाक और गोद लेना।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. क्या बात है जो भारतीय समाज को अपनी संस्कृति को जीवित रखने में अद्वितीय बना देती है? चर्चा कीजिये। **UPSC (Mains) 2019**
2. "जाति व्यवस्था नई-नई पहचानों और सहचारी रूपों को धारण कर रही है। अतः, भारत में जाति व्यवस्था का उन्मूलन नहीं किया जा सकता है।" टिप्पणी कीजिये। **UPSC (Mains) 2018**
3. सहिष्णुता एवं प्रेम की भावना न केवल अति प्राचीन समय से ही भारतीय समाज का एक रोचक अभिलक्षण रही है अपितु वर्तमान में भी यह एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। सविस्तार स्पष्ट कीजिये। **UPSC (Mains) 2017**
4. भारत में विविधता के किन्हीं चार सांस्कृतिक तत्त्वों का वर्णन कीजिये और एक राष्ट्रीय पहचान के निर्माण में उनके आपेक्षिक महत्त्व का मूल्य निर्धारण कीजिये। **UPSC (Mains) 2015**
5. संयुक्त परिवार का जीवन चक्र सामाजिक मूल्यों के बजाय आर्थिक कारकों पर निर्भर करता है। चर्चा कीजिये। **UPSC (Mains) 2014**
6. ऐसे विभिन्न आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक बलों पर चर्चा कीजिये, जो भारत में कृषि के बढ़ते हुए महिलाकरण को प्रेरित कर रहे हैं। **UPSC (Mains) 2014**
7. वर्तमान में भारतीय समाज द्वारा सामना की जाने वाली प्रमुख चुनौतियों की चर्चा कीजिये। हमारे समाज को अधिक समावेशी बनाने के लिये इन चुनौतियों से किस प्रकार निपटा जा सकता है?
8. "भारत की विविधता में विश्वबंधुत्ववाद और एक समान विश्व का आधारभूत सिद्धांत प्रदर्शित होता है लेकिन इसे निरंतर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।" आलोचनात्मक टिप्पणी करें।

अध्याय
2

महिलाओं की भूमिका (Role of Women)

2.1 परिचय
2.2 इतिहास में महिलाओं की भूमिका
2.3 राजनीति में महिलाओं की भूमिका
2.4 शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.5 स्वास्थ्य के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.6 अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका
2.7 कृषि के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.8 मीडिया में महिलाओं की भूमिका
2.9 विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.10 खेल के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.11 सशस्त्र बलों में महिलाओं की युद्धक भूमिका
2.12 पुलिस में महिलाओं की भूमिका

2.1 परिचय *(Introduction)*

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान समय तक भारत में महिलाओं की भूमिका का इतिहास काफी गतिशील रहा है। दूसरे शब्दों में, समय के साथ महिलाओं की भूमिकाओं ने कई बड़े बदलावों का सामना किया है। एक समय था जब भारतीय महिलाओं की भूमिका सिर्फ घर की चहारदीवारी तक सीमित थी, वहीं आज उनकी भूमिकाओं ने घर की चहारदीवारी को तोड़ते हुए उन्हें अंतरिक्ष में पहुँचा दिया है। पिछले कुछ सालों में महिलाएँ कई क्षेत्रों में आगे आई हैं। उनमें नया आत्मविश्वास पैदा हुआ है और वे अब हर काम को चुनौती से भी आगे अवसर के रूप में स्वीकार करने लगी हैं। अब महिलाएँ सिर्फ चूल्हे-चौके तक ही सीमित नहीं रह गई हैं या फिर नर्स, एयर होस्टेस या रिसेप्शनिस्ट ही नहीं रह गई हैं, बल्कि उन्होंने हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा दी है। अब हर वैसा क्षेत्र जहाँ पहले केवल पुरुषों का ही वर्चस्व था, वहाँ स्त्रियों को काम करते देखकर हमें आश्चर्य नहीं होता है। महिलाओं को काम करते देखना हमारे लिये अब आम बात हो गई है। महिलाओं में इतना आत्मविश्वास पैदा हो गया है कि वे अब किसी भी विषय पर बेझिझक बात करती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अब कोई भी क्षेत्र महिलाओं से अछूता नहीं रहा है।

आज भारत में महिलाएँ उस दिशा में अनुगमन कर रही हैं, जिसे पाश्चात्य देशों की महिलाओं ने 70 से 80 वर्ष पहले अपनाया था अर्थात् समान मानव की तरह व्यवहार करने की मांग। आज यह और अधिक स्पष्ट हो गया है कि भारतीय महिलाएँ अपनी बेहद पारंपरिक और धार्मिक संस्कृति के बावजूद पश्चिमी नारीवाद के प्रति अनुकूलित हो सकती हैं। यद्यपि भारतीय समाज की जटिलताओं के कारण भारत में महिलाओं का विकास उनकी पाश्चात्य समकक्षों की तुलना में पूर्णत: परिवर्तित संदर्भ में हुआ, लेकिन मुख्य लक्ष्य समान हैं: समाज, कार्यस्थलों, विद्यालयों तथा घर में पुरुष और महिला में समानता के लिये स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार, शिक्षा एवं रोज़गार के अवसर। पुरुषों के समकक्ष स्वतंत्र धरातल पाने के लिये महिलाओं की आकुलता स्पष्ट देखी जा सकती है।

भारतीय महिलाओं के समक्ष जाति प्रथा, धार्मिक परंपराओं, प्राचीन प्रचलित भूमिकाओं जैसी अन्य चुनौतियाँ तो हैं ही, साथ ही उसे भारतीय समाज के पुरुष सत्तात्मक ताने-बाने से भी लोहा लेना है। एक समय था जब यह स्थिति स्वीकार्य थी, लेकिन पाश्चात्य महिला क्रांति तथा अनुभूति के पश्चात् समानता के अधिकार की वकालत करने वाले राष्ट्रीय तथा वैश्विक स्तर के संगठनों तथा महिलाओं के स्वतंत्र समूहों के योगदान से महिलाओं की भूमिका में धीरे-धीरे विकास के लक्षण परिलक्षित हो रहे हैं। इन सभी का योगदान सराहनीय है, लेकिन अभी भी काफी कुछ करना शेष है, जिसके लिये पुरुषों को अपना पूरा सहयोग देना होगा। अब वे महिलाएँ नहीं हैं जो स्वयं पर हुए अत्याचारों और असुरक्षा का वर्णन करने वाली पुस्तकों की रचना करती थीं। आज की भारतीय नारी की रचनाओं को पुलित्ज़र पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है, जो पुरुष लेखकों को यह बताने के लिये पर्याप्त है कि वे कितनी प्रतिभाशाली तथा क्षमतावान हैं।

अध्याय
3

महिलाओं की समस्याएँ और उनके रक्षोपाय (Women's Problems and their Remedies)

3.1 परिचय
3.2 महिलाओं के विरुद्ध अपराध
3.3 महिलाओं के संरक्षण के लिये प्रमुख संवैधानिक प्रावधान
3.4 घरेलू हिंसा
3.5 दहेज़ प्रथा
3.6 कन्या भ्रूण हत्या एवं चयनित गर्भपात
3.7 बाल विवाह
3.8 महिलाओं का अश्लील चित्रण
3.9 महिलाओं से छेड़छाड़ एवं यौन उत्पीड़न
3.10 वेश्यावृत्ति
3.11 बलात्कार
3.12 महिलाओं का दुर्व्यापार
3.13 समान कार्य हेतु असमान वेतन
3.14 ऑनर किलिंग

3.1 परिचय *(Introduction)*

स्वतंत्र भारत में महिलाएँ तुलनात्मक रूप से सम्मानजनक स्थिति में हैं। कुछ समस्याएँ जो सदियों से महिलाओं को परेशान कर रही थीं, अब नहीं पाई जाती हैं। सती-प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर निषेध, विधवाओं का शोषण, देवदासी प्रथा, पर्दा-प्रथा आदि कुरीतियाँ अब लगभग समाप्त हो गई हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र में विकास, शिक्षा का सार्वभौमीकरण, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलनों, आधुनिकीकरण और इसी तरह के विकास से महिलाओं के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में बदलाव आया है।

इसका मतलब यह नहीं है कि अब महिलाएँ समस्याओं से पूरी तरह से मुक्त हो गई हैं। इसके विपरीत, बदलते परिदृश्यों ने महिलाओं के लिये नई समस्याएँ पैदा की हैं। वे अब नए तनावों और दबावों से घिरी हुई हैं।

3.2 महिलाओं के विरुद्ध अपराध *(Crimes Against Women)*

जब हम महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों की बात करते हैं तो इससे यह स्पष्ट होता है कि कुछ विशेष प्रकार के अपराध सिर्फ महिलाओं के विरुद्ध ही किये जाते हैं। भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code–IPC) के तहत मुख्य तौर पर प्रमुख अपराधों को महिलाओं के विरुद्ध अपराध माना गया है, जैसे- (i) बलात्कार (ii) अपहरण या भगा ले जाना, (iii) दहेज़ हत्या, (iv) उत्पीड़न (शारीरिक एवं मानसिक), (v) छेड़छाड़, (vi) यौन उत्पीड़न व (vii) लड़कियों की तस्करी।

महिलाओं और लड़कियों को जीवन में अपराध का सामना कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, पारिवारिक व्यभिचार और कथित ऑनर किलिंग के रूप में करना पड़ता है। यह दहेज़ संबंधी हत्या या घरेलू हिंसा, दुष्कर्म, यौन शोषण, दुर्व्यवहार, दुर्व्यापार, निरादर और निष्कासन के रूप में हो सकता है। महिलाओं एवं लड़कियों को किसी वस्तु या संपत्ति की तरह खरीदा एवं बेचा जाता है। विवाहेतर संबंधों के अपराध में उन्हें निर्वस्त्र कर एवं उनके सिर मुँड़ाकर सार्वजनिक तौर पर घुमाया जाता है। दहेज़ से संबंधित मामलों में उन्हें ज़िंदा जलाकर मार दिया जाता है। कार्यस्थलों पर उनका शारीरिक एवं मानसिक उत्पीड़न किया जाता है। तेज़ाब से हमला, अश्लील चित्रण, बलात्कार, तस्करी एवं छेड़छाड़ महिलाओं से जुड़ी अन्य समस्याएँ हैं।

महिलाओं के साथ होने वाली ऐसी घटनाओं में अक्सर देखा जाता है कि वे न तो उस समय और न ही घटना के बाद इसका ज़िक्र करती हैं। महिलाएँ न तो घर में अपने साथ होने वाली हिंसा के बारे में बताती हैं और न पुलिस में उसके खिलाफ शिकायत दर्ज कराती हैं। प्रायः वे समझती हैं कि महिलाओं के साथ ऐसा ही होता आया है और इसमें बदलाव नहीं लाया जा सकता है।

अध्याय
4

महिला संगठन
(Women's Organizations)

4.1 राष्ट्रीय संगठन

4.1 राष्ट्रीय महिला संगठन *(National Women Organizations)*

भारत में महिला संगठनों की जड़ें 19वीं शताब्दी में हुए समाज सुधारों से जुड़ी हुई हैं, जिनमें महिलाओं से संबद्ध मुद्दों को उठाया गया और महिला संगठनों की शुरुआत की गई। 19वीं शताब्दी के अंत तक पहले स्थानीय स्तर पर और उसके बाद राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं ने भी स्वयं अपने संगठन बनाने शुरू कर दिये थे। स्वतंत्र भारत में बड़ी संख्या में महिला स्वयंसेवी समूह अस्तित्व में आए, जिन्होंने पितृसत्ता को चुनौती देते हुए महिलाओं के विभिन्न मुद्दों को उठाया। इनमें महिलाओं के विरुद्ध हिंसा तथा राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की अधिकाधिक भागीदारी महत्त्वपूर्ण थी। कुछ प्रमुख महिला संगठनों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है:

आर्य महिला समाज *(Arya Mahila Samaj)*

पंडित रमाबाई ने 1882 में नवशिक्षित महिलाओं को प्रश्रय देने के लिये पुणे एवं पश्चिमी भारत के अन्य भागों में इस संगठन की स्थापना की। इसके तहत बाल विवाह का विरोध, विधवाओं की स्थिति तथा महिला शिक्षा जैसे मुद्दों पर बल दिया गया।

भारत महिला परिषद *(Bharat Mahila Parishad)*

महिलाओं से संबंधित सामाजिक मुद्दों पर एक विचार मंच के रूप में राष्ट्रीय सम्मेलन (National Conference) द्वारा 1904 में महिला शाखा (Women Wing) के रूप में भारत महिला परिषद का गठन किया गया। यह संगठन बाल विवाह, विधवाओं की दशा, दहेज एवं अन्य कुप्रथाओं के खिलाफ केंद्रित था।

स्त्री जरथ्रोस्टी मंडल *(Stree Jarthrosti Mandal)*

यह पारसी महिलाओं का संगठन था। इसने महिलाओं के प्रशिक्षण मंच का कार्य किया। इसके सदस्य बहुत उत्साह के साथ विविध क्षेत्रों में महिलाओं को आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहित करते थे।

भारत स्त्री महामंडल *(Bharat Stree Mahamandal)*

1910 में सरला देवी चौधुरानी ने इलाहाबाद में इसकी स्थापना की। महिलाओं के समान हितों को बढ़ावा देने के लिये यह भारतीय महिलाओं का प्रथम स्थायी संगठन था। महामंडल के नेता पर्दा प्रथा को महिलाओं के उत्थान का सबसे बड़ा रोड़ा मानते थे। इस संगठन ने महिला शिक्षा, बाल विवाह पर रोक और परिवार में महिलाओं की सम्मान बहाली की दिशा में प्रयत्न किये।

भारत में महिलाओं की राष्ट्रीय परिषद *(National Council of Women in India)*

अंतर्राष्ट्रीय महिला परिषद से संबद्ध इस अखिल भारतीय संगठन की स्थापना 1925 में हुई। इसके संचालन में मेहरबाई टाटा की प्रमुख भूमिका रहीं। यह संगठन देश की उच्चवर्गीय महिलाओं का संगठन होने के कारण देश की महिलाओं की आवाज़ नहीं बन सका।

अध्याय
5

नगरीकरण/शहरीकरण (Urbanization)

5.1 परिचय
5.2 नगर
5.3 नगरीकरण/शहरीकरण व नगरीयता
5.4 नगरीकरण/शहरीकरण व औद्योगीकरण
5.5 भारत में नगरीकरण/शहरीकरण
5.6 भारत में नगरीकरण/शहरीकरण के कारण
5.7 नगरीकरण/शहरीकरण का भारतीय समाज पर प्रभाव
5.8 भारत में नगरीकरण/शहरीकरण की समस्याएँ
5.9 भारत में नगरीकरण/शहरीकरण की चुनौतियाँ
5.10 भारत में नगरीकरण/शहरीकरण की चुनौतियों से निपटने के सुझाव
5.11 भारत में नगरीकरण/शहरीकरण से संबंधित योजनाएँ
5.12 मलिन बस्तियों की समस्याएँ
5.13 मलिन बस्तियों की समस्याओं के सुधारात्मक उपागम
5.14 ग्रामीण विकास
5.15 ग्रामीण विकास हेतु केंद्र की प्रमुख योजनाएँ
5.16 रियल एस्टेट (विनियमन और विकास) अधिनियम, 2016
5.17 पथ विक्रेता (आजीविका संरक्षण और पटरी व्यापार विनियमन) कानून, 2014

5.1 परिचय *(Introduction)*

सामान्य अर्थों में नगरीकरण/शहरीकरण से आशय उस प्रक्रिया से है, जिसमें ग्रामीण लोग शहरों में निवास करने लगते हैं तथा कृषि-कार्यों को छोड़कर अन्य व्यवसाय अपनाने लगते हैं। इस प्रक्रिया में ग्रामीण अधिवासों का नगरीय अधिवासों में रूपांतरण होता है, जिससे नगरों का विकास एवं प्रसार होता है।

हालाँकि, शहरीकरण की कोई एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। विभिन्न विद्वानों ने इसे अलग-अलग संदर्भों में परिभाषित किया है, जैसे एक अर्थशास्त्री के लिये शहरीकरण का अर्थ कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था से उद्योग आधारित अर्थव्यवस्था की ओर कदम बढ़ाना है। एक जनसंख्याशास्त्री की दृष्टि से जब ग्रामीण आबादी की तुलना में शहरी आबादी में समानुपातिक वृद्धि होती है तो वह इसे 'शहरीकरण' कहता है। इसी प्रकार एक समाजशास्त्री के नज़रिये से ग्रामीण समाज का शहरी समाज में बदलना ही शहरीकरण है। वह लोक संस्कृति को शहरी संस्कृति में बदलने को शहरीकरण मानता है। भूगोल के क्षेत्र में प्राकृतिक पर्यावरण का शहरी पर्यावरण में बदलना तथा नए शहरों की उत्पत्ति और पुराने नगरों का फैलाव शहरीकरण है। शहरीकरण की इन सभी परिभाषाओं को अगर मिलाकर देखें तो कहा जा सकता है कि शहरीकरण ग्रामीण अधिवासों से नगरों के रूप में कायांतरण की एक समुचित विधि है, जिससे व्यवसाय, अर्थव्यवस्था, भूमि उपयोग, समाज एवं संस्कृति, जीवन और रहन-सहन के स्तर तथा अन्य मानव मूल्यों में गुणात्मक और परिमाणात्मक परिवर्तन क्रमशः स्पष्ट होने लगते हैं।

5.2 नगर *(Urban Area)*

नगर नगरीय समाजशास्त्र की प्रमुख व प्राथमिक अवधारणा है, लेकिन इसको परिभाषित करना कठिन है। यद्यपि नगरीय क्षेत्र या नगर (Urban) शब्द दो अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है- समाजशास्त्रीय रूप में (Sociologically) और जनसांख्यिकीय रूप में (Demographically)। प्रथम अर्थ में विषमता (Heterogenity), गुणवत्ता (Quality of life), अन्योन्याश्रय (Inter-dependence), अवैयक्तिता (Impersonality) पर ध्यान केंद्रित रहता है, जबकि द्वितीय अर्थ में जनसंख्या की सघनता, जनसंख्या के आकार और वयस्क पुरुषों में से अधिकांश के रोज़गार के स्वरूप पर ध्यान केंद्रित किया जाता है।

अध्याय
6

भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के प्रभाव (Effects of Globalization on Indian Society)

6.1 परिचय
6.2 भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव
6.3 भारतीय संस्कृति पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.4 भारतीय महिलाओं पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.5 भारतीय पारिवारिक संरचना पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.6 भारतीय मध्य वर्ग पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.7 भारतीय वृद्धजनों पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.8 भारतीय श्रमिक वर्ग पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.9 भारतीय जनजातियों पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.10 भारतीय कृषि पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.11 भारतीय अर्थव्यवस्था पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.12 भारतीय शिक्षा पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.13 भारतीय स्वास्थ्य व्यवस्था पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.14 भारतीय ग्रामीण क्षेत्र पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.15 भारतीय सिनेमा पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.16 भारतीय भाषाओं पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.17 भारतीय पर्यावरण पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.18 अनौपचारिक संरचना पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.19 राष्ट्र-राज्य पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
6.20 भूमंडलीकरण और राजनीतिक परिवर्तन
6.21 भूमंडलीकरण और पंथ निरपेक्षता

6.1 परिचय *(Introduction)*

भूमंडलीकरण वस्तुतः एक प्रक्रिया को इंगित करता है जिसमें व्यापार के वैश्विक नेटवर्क (Global Network of Trade), संचार, आव्रजन (Immigration) और परिवहन के माध्यम से अर्थव्यवस्थाओं, समाजों एवं संस्कृतियों का एकीकरण हो गया है।

अभी हाल तक भूमंडलीकरण को मुख्यतः विश्व के आर्थिक पक्षों- व्यापार, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, अंतर्राष्ट्रीय पूंजी प्रवाह आदि तक केंद्रित कर देखा जाता था, लेकिन अब इसे व्यापक संदर्भों में देखा जा रहा है। इसके अंतर्गत संस्कृति, मीडिया, तकनीक तथा सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक गतिविधियों और यहाँ तक कि जैविक गतिविधियों, जैसे- जलवायु परिवर्तन संबंधी मुद्दों को भी शामिल किया गया है।

आज भूमंडलीकरण के प्रभाव से कोई भी देश अछूता नहीं है। किसी-न-किसी रूप में इसका प्रभाव सभी देशों पर दिखाई पड़ता है। भारतीय लोगों के जीवन, संस्कृति, रुचि, फैशन, प्राथमिकता इत्यादि पर भी भूमंडलीकरण का व्यापक प्रभाव पड़ा है। एक तरफ इसने आर्थिक विकास को गति और प्रौद्योगिकी का विस्तार कर लोगों के जीवन-स्तर को सुधारने में मदद की है तो दूसरी ओर स्थानीय संस्कृति और परंपरा में सेंध लगाकर हम पर विदेशी संस्कृतियों को थोपने का प्रयास किया है। भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के प्रभाव को नीचे दिये गए विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत देखा जा सकता है।

6.2 भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव *(Negative and Positive Effects of Globalization on Indian Society)*

सामान्य अर्थ में भूमंडलीकरण एक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और वैश्विक व्यवस्था है, जिसमें बाज़ारी ताकतें इतनी शक्तिशाली होती हैं कि उनका प्रभाव जीवन के हर क्षेत्र पर देखा जा सकता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत उपभोग तथा उपभोक्तावाद, राष्ट्र तथा राज्य की संप्रभुता का ह्रास, अर्थव्यवस्था का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होना एवं सूचनाओं का बिना किसी समय को बर्बाद किये हुए प्राप्त करना शामिल है।

अध्याय
7

सामाजिक सशक्तीकरण (Social Empowerment)

7.1 सामाजिक सशक्तीकरण का अर्थ
7.2 वैचारिक उपागम
7.3 सामाजिक सशक्तीकरण के तत्त्व
7.4 सामाजिक सशक्तीकरण की आवश्यकता क्यों?
7.5 सामाजिक आर्थिक अपवर्जन/सीमांतीकरण के आधार
7.6 सीमांत समूहों के सामाजिक सशक्तीकरण की दिशा
7.7 सामाजिक सशक्तीकरण हेतु उठाए गए कदमों का मूल्यांकन

7.1 सामाजिक सशक्तीकरण का अर्थ *(Meaning of Social Empowerment)*

सामाजिक सशक्तीकरण का अर्थ है- सामाजिक, शैक्षिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं अन्य प्रकार के अवसरों से वंचित समुदायों की शक्ति एवं विश्वास में बढ़ोतरी करना। दूसरे शब्दों में, समाज के कमज़ोर वर्ग के लोगों को आधारभूत अवसर उपलब्ध कराने की प्रक्रिया ही सामाजिक सशक्तीकरण है। भारत के संदर्भ में देखें तो समाज के कमज़ोर वर्गों में महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़ा वर्ग, कई धार्मिक समुदायों तथा तृतीय लिंगियों (Third Genders) आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। सामाजिक सशक्तीकरण के अंतर्गत निम्नलिखित घटकों को शामिल किया जा सकता है-

- स्वयं की निर्णय लेने की क्षमता।
- सूचनाओं और संसाधनों तक पहुँच, ताकि उचित निर्णय लिये जा सकें।
- सामूहिक निर्णय प्रक्रिया में अपनी बात रख पाने की क्षमता।
- विकल्पों का बहुतायत होना।
- परिवर्तन के प्रति सकारात्मक सोच होना।
- स्वयं तथा समूह के विकास के लिये सीखने की क्षमता का होना।
- लोकतांत्रिक तरीकों से दूसरों की सोच में परिवर्तन लाने की क्षमता।
- विकास तथा परिवर्तन की प्रक्रियाओं में सतत् भागीदारी।
- कमियों से पार पाना तथा स्वयं की छवि का सकारात्मक विकास।

उपरोक्त घटकों का विश्लेषण करने पर सामाजिक सशक्तीकरण के कुछ प्रमुख तत्त्व (Elements) उभरकर सामने आते हैं, जिनसे इन कमज़ोर वर्गों को सशक्त बनाकर इन्हें विकास की मुख्य धारा में शामिल किया जा सकता है। ये प्रमुख तत्त्व हैं-

- सूचनाओं तक पहुँच (Access to Information)
- समावेशन और भागीदारी (Inclusion and Participation)
- जवाबदेही (Accountability)
- स्थानीय सांगठनिक क्षमता (Local Organizational Capacity)

7.2 वैचारिक उपागम *(Ideological Approach)*

किसी व्यक्ति, समुदाय या संगठन की सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक, शैक्षिक, लैंगिक या आध्यात्मिक शक्ति में सुधार तथा वृद्धि को 'सशक्तीकरण' कहा जाता है। सशक्तीकरण का वैचारिक उपागम किसी व्यक्ति विशेष, संगठनात्मक कार्य-प्रणाली और समुदाय की शक्ति में सुधार के प्रयासों, रणनीतियों, प्रक्रियाओं तथा प्रभावों का विश्लेषण करता है।

अध्याय
8

सांप्रदायिकता (Communalism)

8.1 सांप्रदायिकता का अर्थ
8.2 सांप्रदायिकता की सैद्धांतिक समझ
8.3 सांप्रदायिकता के विभिन्न चरण
8.4 सांप्रदायिकता का विकास
8.5 सांप्रदायिकता के विभिन्न रूप
8.6 सांप्रदायिकता के कारण
8.7 सांप्रदायिकता के दुष्परिणाम
8.8 सांप्रदायिकता दूर करने के प्रयास
8.9 सांप्रदायिकता से निपटने के सुझाव

8.1 सांप्रदायिकता का अर्थ *(Meaning of Communalism)*

सामान्य अर्थों में सांप्रदायिकता किसी विशेष धर्म अथवा धार्मिक संप्रदाय की उग्र भावना का द्योतक है, जिसमें दूसरे धर्मों अथवा धार्मिक संप्रदायों के प्रति विरोध और घृणा का प्रदर्शन किया जाता है। इसके आधार के रूप में वह काल्पनिक या वास्तविक भय कार्य करता है, जिसके अंतर्गत एक विशेष धार्मिक समूह इस आशंका से घिरा रहता है कि दूसरे धार्मिक समूह उसके विरोधी हैं और उसे नष्ट करने के लिये प्रतिबद्ध हैं। सांप्रदायिकता के अंतर्गत एक ऐसी मानसिकता कार्य करती है जिसमें विरोध, घृणा अथवा हिंसा के माध्यम से अन्य धार्मिक समूहों को दबाने का प्रयत्न किया जाता है। सांप्रदायिकता का धार्मिक कट्टरता के साथ प्रत्यक्ष संबंध होता है, क्योंकि धार्मिक कट्टरता में होने वाली वृद्धि या कमी के साथ सांप्रदायिकता में भी वृद्धि या कमी होती रहती है। वर्तमान समय में सांप्रदायिकता की संकल्पना में राजनीतिक उद्देश्य भी सम्मिलित होते जा रहे हैं, क्योंकि आज राजनीतिक स्वार्थों की परिपूर्ति हेतु इसका खुलकर उपयोग किया जा रहा है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि सांप्रदायिकता एक ऐसी अभिवृत्ति है जिसके अंतर्गत एक विशेष धर्म अथवा संप्रदाय के अनुयायी अपने धार्मिक एवं राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिये स्वयं के समूह को अन्य धार्मिक समूहों के विरुद्ध संगठित करते हैं तथा आवश्यकता के अनुरूप उन्हें उग्र प्रदर्शनों एवं हिंसा के लिये उकसाते हैं।

यदि भारत के संदर्भ में देखें तो प्राचीन काल से ही यह विभिन्न धर्मों, संप्रदायों, विचारधाराओं तथा परंपराओं का देश रहा है। यहाँ न केवल विभिन्न धर्मों का विकास हुआ, बल्कि एक धर्म के अंदर भी विभिन्न मतावलंबियों का निर्माण होता रहा। हालाँकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इन विभिन्न विचारधारा वाले समूहों ने यहाँ की संस्कृति को पुष्पित-पल्लवित करने में अहम योगदान दिया, लेकिन धीरे-धीरे इन समूहों के बीच अलग-अलग आधारों पर पृथक्करण की भावना सबल होती गई। इस भावना से ग्रस्त होकर प्रत्येक धार्मिक समूह स्वयं को एक अलग इकाई मानकर अपने हितों को प्राथमिकता देने लगा तथा ईर्ष्या, द्वेष, विरोध, संघर्ष और हिंसा के माध्यम से दूसरे धार्मिक समूहों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयास करने लगा। धार्मिक पूर्वाग्रहों और धार्मिक अंधभक्ति की यही प्रवृत्ति सांप्रदायिकता है जो वर्तमान में भारतीय समाज के सामने एक भयावह समस्या के रूप में विद्यमान है।

8.2 सांप्रदायिकता की सैद्धांतिक समझ *(Theoretical Understanding of Communalism)*

किसी देश या क्षेत्र विशेष में जब एक समुदाय विशेष के लोगों का एक बड़ा भाग अपने सामूहिक लक्ष्यों की प्राप्ति में असफल हो जाता है या फिर उसे यह महसूस होता है कि उसके विरुद्ध भेदभाव हो रहा है, परिणामस्वरूप उसे समान अवसरों से वंचित रखा जा रहा है तो उनमें एक प्रकार की कुंठा और मोहभंग की भावनाएँ जाग्रत हो जाती हैं। यही सामूहिक कुंठा सांप्रदायिकता को जन्म देती है, जिसका एक परिणाम सांप्रदायिक हिंसा के रूप में देखने को मिलता है। वस्तुत: इस

अध्याय
9

क्षेत्रवाद (Regionalism)

9.1 क्षेत्र का अर्थ
9.2 क्षेत्रवाद
9.3 क्षेत्रवाद में अंतर के विभिन्न आधार
9.4 क्षेत्रवाद के विभिन्न स्वरूप
9.5 क्षेत्रवाद समस्या के रूप में
9.6 क्षेत्रवाद एकीकरण के उपकरण के रूप में
9.7 क्षेत्रवाद के लिये उत्तरदायी कारक
9.8 क्षेत्रवाद और पृथक् राज्यों की मांग
9.9 क्षेत्रवाद और अंतर्राज्यीय तनाव
9.10 क्षेत्रवाद और केंद्र-राज्य संघर्ष
9.11 क्षेत्रवाद और संघ से पृथकता
9.12 नए राज्यों के गठन की मांग
9.13 क्षेत्रवाद के परिणाम
9.14 क्षेत्रवाद की समस्या के समाधान हेतु उपाय

9.1 क्षेत्र का अर्थ *(Meaning of Region)*

क्षेत्र एक सापेक्ष शब्द है। इसे अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग तरह से समझा जाता है। इसके लिये भौतिक और सांस्कृतिक विशेषताओं को आधार बनाया जाता है। इसके भिन्न-भिन्न प्रयोगों में कई बार बहुत से राष्ट्रों को सम्मिलित किया जाता है उदाहरण के लिये, आर्कटिक क्षेत्र, सुदूर पूर्वी क्षेत्र, दक्षिण-पूर्व एशिया। इसी प्रकार भारत में राजनीतिक सीमा वाले प्रदेश भी विभिन्न क्षेत्रों को बनाते हैं। साथ ही एक प्रदेश की सभी सीमा के अंदर उपक्षेत्र भी हो सकते हैं, जैसे- गुजरात में विदर्भ का क्षेत्र, आंध्र प्रदेश का तेलंगाना क्षेत्र।

वस्तुत: हर क्षेत्र अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक भिन्नता और अपने रीति-रिवाज़ों, परंपराओं, मूल्यों और आदर्शों के प्रति चेतनता रखते हुए प्रत्येक क्षेत्र पर्याप्त रूप में एक विशिष्ट अस्तित्ववान इकाई के रूप में पहचाना जाता है। इस चेतनता के चलते एक क्षेत्र के लोग एक होने का भाव रखते हैं; जो कि अन्य क्षेत्रों से अलग होता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समूह में रहता है और उसका समूह के साथ भावनात्मक संबंध और इसके कारण उसमें समूह के प्रति लगाव का भाव भी उत्पन्न होता है। यह भाव उसमें सुरक्षा की भावना का विकास भी करता है। इसी तरह उसकी उन भौगोलिक परिस्थितियों के प्रति भी आस्था उत्पन्न हो जाती है, जिसमें वह रहता है और उसके सांस्कृतिक समानता के तत्त्वों को महसूस करता है। इसके ज़रिये ही उसके विविध सामाजिक हितों की पूर्ति भी होती है।

9.2 क्षेत्रवाद *(Regionalism)*

क्षेत्र की विशिष्टता वहाँ के लोगों के मध्य फैली हुई विस्तृत एकात्मकता की भावना से अभिव्यक्त होती है। इस एकता के कई स्रोत होते हैं: जैसे- भूगोल, स्थलाकृति, धर्म, राजनीति और आर्थिक विकास, भाषा, रीति-रिवाज और लोकाचार आस्था जीवन यापन के तौर-तरीके, ऐतिहासिक अनुभवों में साम्यता आदि। इन आधारों पर क्षेत्र की अस्मिता का उद्भव होता है, जिससे क्षेत्रीय एकात्मकता का उदय होता है। इससे किसी क्षेत्र के प्रति वहाँ से संबद्ध लोगों में एक प्रकार की निष्ठा का भाव होता है, यही निष्ठा क्षेत्रवाद का आकार और स्वरूप प्राप्त कर लेती है, जो क्षेत्रीय राजनीति का मार्ग प्रशस्त करती है।

क्षेत्रवाद को एक परिघटना तथा अवधारणा के रूप में व्याख्यायित करते हुए कहा जा सकता है कि इसके अंतर्गत लोगों की राजनीतिक निष्ठाएँ एक क्षेत्र विशेष पर केंद्रित हो जाती हैं। इसका अभिप्राय है कि लोगों का लगाव देश की अपेक्षा किसी क्षेत्र विशेष के साथ अधिक हो जाता है।

क्षेत्रवाद भारतीय राजनीति के स्वरूप और रचना को निर्धारित करने वाली प्रमुख शक्तियों में से एक है। यह प्राय: अन्य राजनीतिक शक्तियों को साथ में लेकर क्रियाशील होती है। उदाहरणार्थ- क्षेत्रवाद, जातिवाद साथ-साथ पाए जाते हैं। क्षेत्रवाद किसी क्षेत्र के लोगों में उस भावना और प्रयत्नों का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके माध्यम से वे उस क्षेत्र विशेष के लिये आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक शक्तियों में वृद्धि करना चाहते हैं।

अध्याय
10

जनसंख्या एवं संबद्ध मुद्दे
(Population and Associated Issues)

10.1	जनांकिकी व जनगणना	10.8	पुनरुत्पादन/प्रजननीय स्वास्थ्य
10.2	जनसंख्या संबंधी प्रमुख सिद्धांत	10.9	जनसंख्या वृद्धि के परिणाम
10.3	जनांकिकीय संक्रमण सिद्धांत	10.10	जनसंख्या नियंत्रण के उपाय
10.4	भारत की जनसंख्या की विशेषताएँ	10.11	जनसंख्या नियंत्रण के सुझाव
10.5	जनसंख्या का उम्र-लिंग वितरण	10.12	प्रव्रजन
10.6	ढलती उम्र की जनसंख्या से संबद्ध समस्याएँ	10.13	जनसंख्या संबंधी प्रमुख शब्दावलियाँ
10.7	जनसंख्या वृद्धि के जनांकिकीय कारक		

10.1 जनांकिकी व जनगणना *(Demography & Census)*

जनांकिकी *(Demography)*

जनांकिकी, मानव जनसंख्या का सांख्यिकीय अध्ययन है। इसमें गतिशील मानव आबादी, जो समय तथा स्थान के अनुरूप परिवर्तित होती है, के अंतर्गत जनसंख्या के आकार, संरचना एवं वितरण और जन्म, मृत्यु एवं प्रवास आदि के संदर्भ में स्थानिक या कालिक परिवर्तन का अध्ययन शामिल होता है। जनांकिकीय विश्लेषण को शिक्षा, धर्म, जाति तथा राष्ट्रीयता जैसे मानदंडों के आधार पर विभाजित पूरे समाज या समूहों पर लागू किया जा सकता है। जनांकिकी को प्रायः समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र या मानव विज्ञान की एक शाखा के रूप में माना जाता है। औपचारिक जनांकिकी के अध्ययन का लक्ष्य जनसंख्या की प्रक्रियाओं के मापन तक सीमित है, जबकि सामाजिक जनांकिकी जनसंख्या संबंधी अध्ययन का अधिक व्यापक क्षेत्र है, जो जनसंख्या को प्रभावित करने वाले आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और जैविक प्रक्रियाओं के बीच संबंधों का विश्लेषण करता है। यह किसी खास जनसमुदाय की विशेषताओं को निर्दिष्ट करता है, जिसका प्रयोग सरकारी, विपणन या अभिमत संबंधी अनुसंधानों में होता है।

जनगणना *(Census)*

जनगणना जनांकिकीय आँकड़े एकत्रित करने की एक आम विधि है। जनगणना संघ सूची का विषय है और इसके तहत देश के हर व्यक्ति को गिनने का प्रयास होता है। महत्त्वपूर्ण जनांकिकीय आँकड़ों को आमतौर पर लगातार एकत्र किया जाता है और वार्षिक आधार पर संक्षेपित किया जाता है। जनगणना सामान्यतया हर 10 साल में होती है और इस प्रकार जन्म एवं मृत्यु के आँकड़ों के लिये सबसे विश्वसनीय व प्रामाणिक स्रोत जनगणना है।

जनगणना की एक बार प्रक्रिया पूर्ण करने के पश्चात् अधिक गणना या अल्पगणना कितनी हुई है, इसका अनुमान विश्लेषकों द्वारा लगाया जाता है। जनगणना केवल लोगों की गिनती के अलावा भी कई पक्षों को सम्मिलित करती है। यह आमतौर पर परिवारों या घरों से संबंधित जानकारियाँ एकत्रित करने के साथ-साथ अन्य व्यक्तिगत विशेषताओं, जैसे- उम्र, लिंग, वैवाहिक स्थिति, साक्षरता/शिक्षा, रोज़गार स्थिति और व्यवसाय तथा भौगोलिक अवस्थिति से संबंधित जानकारियाँ भी इकट्ठी करती है। जनगणना के अंतर्गत प्रवास (जन्म स्थान या पिछला निवास स्थान), भाषा, धर्म, राष्ट्रीयता (या जातीयता या नस्ल) और नागरिकता के आँकड़े भी एकत्र कर सकते हैं।

उन देशों में जहाँ महत्त्वपूर्ण पंजीकरण प्रणाली अधूरी हो, जनगणना का इस्तेमाल मृत्यु दर और प्रजनन क्षमता के बारे में जानकारी के प्रत्यक्ष स्रोत के रूप में भी किया जाता है। उदाहरण के लिये चीन की जनगणना ऐसे जन्मों तथा मृत्यु की जानकारी एकत्र करती है, जो जनगणना के ठीक पहले 18 महीने में घटित हुई हों। आँकड़े एकत्र करने के अप्रत्यक्ष तरीकों की ज़रूरत उन देशों में होती है, जहाँ पूरे आँकड़े उपलब्ध नहीं होते हैं। जनगणना के अप्रत्यक्ष तरीकों को प्रायः विकासशील देशों में अपनाया जाता है, जहाँ लोगों से उनके भाई-बहन, माता-पिता और बच्चों के बारे में पूछा जाता है।

अध्याय
11

गरीबी और विकासात्मक मुद्दे
(Poverty and Developmental Issues)

11.1	गरीबी की अवधारणा एवं प्रकार	11.8	गरीबी के कारण
11.2	भारत में गरीबी मापन के तरीके	11.9	गरीबी उन्मूलन के उपाय
11.3	भारत में गरीबी की संस्कृति	11.10	भूमंडलीकरण एवं गरीबी
11.4	गरीबी की जड़ें	11.11	गरीबी निवारण हेतु राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय लक्ष्य
11.5	निर्धनता जाल	11.12	भारत में गरीबी कम करने हेतु सुझाव
11.6	गरीबी एवं अपराध के बीच सहसंबंध	11.13	गरीबी निवारण से संबंधित प्रमुख सरकारी कार्यक्रम
11.7	गरीबी एवं बाल श्रम		

11.1 गरीबी की अवधारणा एवं प्रकार *(Types and Concept of Poverty)*

निर्धनता का सामान्य अभिप्राय है- धन के अभाव की स्थिति, यानी जब व्यक्ति जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति से वंचित हो जाता है। इस अर्थ में यह मात्र एक आर्थिक समस्या प्रतीत होती है, जिसमें आय, संपत्ति तथा रहन-सहन के स्तर शामिल हैं तथा उन लोगों को गरीब माना जाता है, जिनकी आय इतनी नहीं होती कि वे रोटी, कपड़ा और मकान जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। भारत और अमेरिका द्वारा अपनाई गई गरीबी की रेखा की अवधारणा में निश्चित आमदनी के स्तर को ही गरीबी रेखा के तौर पर निर्धारित किया गया है। जो लोग उस रेखा से नीचे आते हैं, वे गरीब माने जाते हैं। गरीबी की रेखा की यह आवधारणा व्यापक संदर्भ में यद्यपि एकांगी प्रतीत होती है, फिर भी कम-से-कम गरीबों के संदर्भ में इससे जानकारी तो अवश्य ही मिलती है। वहीं अत्यधिक गरीबी के लिये 'कंगाली' (Destitution) शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। इस शब्द का प्रयोग उन लोगों के लिये किया जाता है, जो अपना पेट पालने में भी असमर्थ हैं।

कुछ समय पूर्व तक भारत में निर्धनता पर कुछ विशेष ध्यान नहीं दिया गया था, क्योंकि इसे जीवन के एक सामान्य तथ्य के रूप में स्वीकार कर लिया गया था। अपनी गरीबी के लिये व्यक्ति विशेष को ही उत्तरदायी माना गया। कर्म-नियम तथा पुनर्जन्म के सिद्धांत के आधार पर निर्धनता की वर्तमान दशा को व्याख्यायित करने का प्रयास किया गया। यहाँ यह तथ्य महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि निर्धनता के लिये वंचना की स्थिति का होना आवश्यक है, क्योंकि स्वेच्छा से अपनाई गई गरीबी की दशा को वास्तविक या स्वाभाविक गरीबी के अंतर्गत नहीं रखा जा सकता, उदाहरण के लिये- संन्यासी जीवन व्यतीत करने वाले लोग। वस्तुतः भौतिक सुख-सुविधाओं का त्याग इनके द्वारा स्वेच्छा से किया जाता है। अतः वंचना जैसी कोई स्थिति यहाँ उत्पन्न नहीं होती।

आज गरीबी का अध्ययन करते हुए उसके अनेक आयामों पर विचार किया जाता है। इसे केवल आर्थिक संदर्भों से नहीं जोड़ा जाता। इसके अन्य आयामों में समाजशास्त्रीय, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक तथा भौगोलिक पक्षों के साथ-साथ जीवन-मूल्य प्रणाली भी शामिल हैं। यह व्यक्ति की शक्तिहीनता तथा संसाधनहीनता की स्थिति को दर्शाता है। गरीबी की स्थिति के विभिन्न आयाम हैं; जैसे- जीविका अथवा आय के निश्चित स्रोत का अभाव, अवसरों तथा रणनीतियों का अभाव, धन अथवा संसाधनों तक पहुँच का नहीं होना, असुरक्षा की भावना तथा संसाधनों के अभाव के कारण अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक संबंध रखने और विकसित करने की अक्षमता आदि।

गरीबी की दशा में आर्थिक विषमता के परिणामस्वरूप सामाजिक विषमता उत्पन्न होती है। इसे निर्णय-निर्माण, नागरिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में सहभागिता के अभाव के रूप में भी देखा जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार गरीबी विकल्पों एवं अवसरों से वंचित करना तथा मानव गरिमा का उल्लंघन है। गरीबी आय तथा धन के संदर्भ में, जो व्यक्ति के पास है और जो होना चाहिये, उस के बीच के अंतराल को प्रदर्शित करती है। इस प्रकार यह वंचना की एक दशा को भी

अध्याय
12

धर्मनिरपेक्षता (Secularism)

12.1	धर्मनिरपेक्षता का अर्थ	12.7	क्या भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य है?
12.2	धर्मनिरपेक्षता की भारतीय धारणा	12.8	पंथनिरपेक्षता
12.3	धर्मनिरपेक्ष समाज की धारणा	12.9	धर्मनिरपेक्षता व पंथनिरपेक्षता में अंतर
12.4	क्या भारत धर्मनिरपेक्ष समाज है?	12.10	क्या धर्मनिरपेक्ष राज्य में धर्मांतरण पर प्रतिबंध होना चाहिये?
12.5	राजनीति व धर्म का संबंध	12.11	लोकतंत्र व धर्मनिरपेक्षता में संबंध
12.6	धर्मनिरपेक्ष राज्य की धारणा		

12.1 धर्मनिरपेक्षता का अर्थ *(Meaning of Secularism)*

'धर्मनिरपेक्षता' अंग्रेज़ी शब्द 'Secularism' का अनुवाद है, जो मूलत: लैटिन शब्द 'Seculam' से बना है। 'Seculam' का अर्थ होता है- इहलोक से संबंधित। अत: शाब्दिक अर्थ की दृष्टि से 'Secularism' का अर्थ हुआ- वह विचारधारा जो मनुष्य को परलोक की चिंता छोड़कर इहलोक से संबंधित होने की प्रेरणा देती है। इसे धर्मनिरपेक्षता इसलिये कहा जाता है क्योंकि यह विचारधारा पारंपरिक धर्मों की परलोककेंद्रित (That worldly) मानसिकता का विरोध करती है।

धर्मनिरपेक्षतावाद आधुनिक काल की एक भौतिकवादी (Materialist) तथा मानववादी (Humanist) विचारधारा है जो वैज्ञानिक मनोवृत्ति (Scientific Temper) के आधार पर इहलोक के महत्त्व की स्थापना करती है। भौतिकवादी होने के कारण यह भौतिक जगत को अंतिम सत्य मानती है तथा इसके पीछे ईश्वर, आत्मा या स्वर्ग जैसी पारलौकिक सत्ताओं को स्वीकार नहीं करती। मानववादी होने के कारण यह अपने चिंतन के केंद्र में मनुष्य और उसकी सांसारिक समस्याओं को रखती है। इस विचारधारा की प्रमुख मान्यताएँ इस प्रकार हैं-

धर्मनिरपेक्षतावाद धर्म का समर्थन नहीं करता क्योंकि धर्म पारलौकिक विश्वासों पर टिका होता है जबकि धर्मनिरपेक्षतावाद ऐसे विश्वासों से तटस्थ रहता है। **धर्म की उपेक्षा या विरोध** का दूसरा कारण यह भी है कि धर्म वैज्ञानिक मनोवृत्ति तथा भौतिक विकास में बाधक बनता है जबकि कुछ विचारकों के अनुसार भौतिक विकास ही मनुष्य का वास्तविक उद्देश्य है। यहाँ यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि धर्मनिरपेक्षतावाद मज़हब (Religion) वाले अर्थ में ही धर्म का विरोध करता है; भारतीय परंपरा के उस अर्थ में नहीं जिसमें धर्म को नैतिकता का समानार्थक माना गया है। धर्मनिरपेक्षतावाद की दूसरी प्रमुख मान्यता है- सिर्फ **इहलोक में विश्वास करना**। इस विचार का इतना अधिक महत्त्व है कि इसे कहीं-कहीं इहलोकवाद भी कहा जाता है।

धर्मनिरपेक्षतावादियों ने **विज्ञान और तकनीक के विकास पर अत्यधिक बल** दिया है। उनका दावा है कि मनुष्य का कल्याण और उसके सुखों में वृद्धि ईश्वर की प्रार्थना करने से नहीं बल्कि विज्ञान-तकनीक के विकास से ही संभव है। विज्ञान का अर्थ है- उन नियमों की खोज करना जिनके अनुसार प्रकृति संचालित होती है। तकनीक इसका अगला स्तर है। इसका अर्थ है विज्ञान के नियमों का प्रयोग इस प्रकार करना कि मनुष्य को अधिकतम सुखों की प्राप्ति हो सके। प्रो. फ्लिंट का मानना है कि धर्मनिरपेक्षतावाद वह विचारधारा है जिसके अनुसार मनुष्य का कल्याण विज्ञान-तकनीक के हाथों से संभव है।

धर्मनिरपेक्षतावादी **धर्मनिरपेक्ष नैतिकता** (Secular Morality) पर बल देते हैं। धर्म और नैतिकता के पारस्परिक संबंध को लेकर हमेशा विवाद रहा है कि नैतिकता धर्म पर निर्भर है या धर्म से स्वतंत्र है। कई पारंपरिक चिंतक मानते हैं कि जो नैतिकता धर्म पर आधारित नहीं होती, वह वस्तुत: नैतिकता होती ही नहीं। प्रो. गैलवे, दोस्त्योवस्की तथा महात्मा गांधी जैसे

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी, फ्लोचार्ट तथा मानचित्र का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- क्विक रिवीजन हेतु प्रत्येक अध्याय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों का संकलन।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS
YouTube Drishti IAS
drishtiias
drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 8750187501, 011-47532596